परमात्मा में सब कुछ सुलभ

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

परमात्मा किसे कहते हैं? जीवात्मा का शरीर वह है जिसमें पाँच इन्द्रियों के रूप में जीवन जीया जाये। पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, मन, बुद्धि इत्यादि से युक्त जीवात्मा का शरीर है। जीवात्मा माया के अधीन रहता है। परमात्मा माया को अपने अधीन किये रहता है। सामान्य रूप से मानव खाओ पीओ और मस्त रहो का ही जीवन जीता है। जब जीवात्मा परमात्मा के संसर्ग में आता है तो उसका अज्ञान नष्ट होता है। बुद्धि चिंतन करती है। माया राग, द्वेष, कषाय सब जीवात्मा में रहते हैं। जब ये सभी चीजें नष्ट होती है तब जीवात्मा परमात्मा की ओर जाने लगता है। शुभ कर्मों और पुण्योदय से संतसंगति प्राप्त होती है। इसके बाद मनुष्य शुभ कर्य में लगता है। ज्ञानी ज्ञान के सम्प्रेषण के साथ ही जीव को परमात्मा का ज्ञान करा देता है। जीवात्मा से धीरे'–धीरे कर्मरज झड़ते रहते हैं। जब सम्पूर्ण कर्मरज आत्मा से निकल जाते हैं तब आत्मा परमात्मा बनता है। इसकी एक प्रक्रिया है। जैन दर्शन में इसे संवर और निर्जरा कहा जाता है। संवर का अर्थ है– आत्मा की तरफ कर्मों का प्रवाह रुक जाना और निर्जरा का अर्थ है– पूर्व अर्जित कर्मों का आत्मा से निकल जाना। इस प्रक्रिया के बाद ही आत्मा परमात्मा बनता है। परमात्मा सभी सुखों की खान है। परमात्मा सचिदानन्द स्वरूप है, शुद्ध है और ज्ञान स्वरूप है।

भाव बिगड़ने से भव बिगड़ जाता है। भव को सुधारने के लिए परमात्मा की शरण में जाना आवश्यक है। मानव को संसार के प्रति ज्ञाता दृष्टा भाव रखना चाहिए। मैं और मेरा का भाव छोड़ देना चाहिए। मैं और मेरापन स्वार्थ को बढ़ाता है। मानव जीवन की प्राप्ति, ईश्वर के प्रति श्रद्धा, अच्छी बातों का ग्रहण करना आजकल बहुत दुर्लभ दिखाई दे रहा है। मैं कौन हूं? कहॉ से आया हूॅ? सृष्टि को चलाने वाला कौन है? इन सब बातों को जब सांगोपांग रूप से जान लिया जाता है तो जीवन की समस्या का समाधान मिल जाता है। सृष्टि जड़ और चेतन पदार्थों से बनी है। जड़ कभी चेतन और चेतन कभी जड़ नहीं हो सकता। एक–दूसरे में

रूपान्तरण नहीं हो सकता। शरीर जड़ और चेतन का मिश्रित रूप है। जब शरीर अपना कार्य करता है तो उसके पीछे चेतना की शक्ति रहती है। यदि चेतन न रहे तो शरीर निरर्थक हो जायेगा।

मन, वचन और काया का कार्य चेतना की प्रेरणा से होता है। आत्मा अरूपी है। अरूपी आत्मा जड़ का संचालन करती है। आत्मा का लक्षण ज्ञाता द्रष्टा भाव है। आत्मा जानने वाला हे इसलिए उसे ज्ञाता कहते हैं। तटस्थ भाव से वह सब कुछ देखता है। कर्म से वह निष्प्रभावी रहता है। जिसने आत्म तत्त्व को जान लिया उसने सम्पूर्ण ब्रहमाण्ड को जान लिया। यह जगत् दो तत्वों से मिलकर बना है– जड़तत्व और चेतनतत्व। जड़तत्व वह है जिसमें पूरण और गलन की क्रिया होती है। दर्शन की भाषा में इसे पुद्गल या भौतिक तत्व कहते हैं। आत्मतत्व वह तत्व है जिसमें हलन–चलन की क्रिया होती है। ये दोनों तत्व शाश्वत हैं। इनके गुण पृथक–पृथक हैं। दोनों को मिश्रण को संसार कहते हैं। शरीर भौतिक तत्वों से बना है। चेतनतत्व इसे संचालित करता है। यदि चेतनतत्व न रहे तो शरीर नष्ट हो जायेगा।

आत्मा हर प्राणी में होती है। शरीर के नष्ट होने पर आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में अपने कर्म के अनुसार चली जाती है। जड़तत्व इस ब्रह्माण्ड में रहता है। जब तक कार्मण शरीर का आत्मा से संबंध रहता है तब तक जीव को शरीर धारण करना पड़ता है। जब आत्मा कर्मों से मुक्त होती है तो वह मोक्ष को चली जाती है। संयोग, वियोग, सुख, दुःख चलता रहता है। आत्मसाक्षात्कार के द्वारा आत्मा मुक्त होता है। इस संसार में अनेक विद्याये हैं। किन्तु आत्मविद्या सबसे बड़ी विद्या है, जिसको इस विद्या का ज्ञान हो जाता है, उसके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं रहता है। जिसने इस विद्या को जान लिया वह सबकुछ जान लेता है। इसलिए कहा गया है– **जे एगं जाणइ ते सव्वं जाणइ** अर्थात् जो एक को जान लेता है वह सबको जान लेता है।

आत्मा ही एक ऐसा तत्व है जिसको जान लेने के बाद सबकुछ जान लिया जाता है। उपनिषदों में आत्मतत्व का बृहद् रूप से व्याख्यान है। अब प्रश्न उठता है कि आत्मतत्व को जाना कैसे जाये? आत्मतत्व के ज्ञान की अनेक विधियां बताई गयी है। राग–द्वेष रहित होकर आत्मतत्व की प्रेक्षा करने से आत्मतत्व का दर्शन होता है। आत्मा में अनंत ज्ञान अनंत दर्शन

और अनंत सुख का स्रोत है। मानव भौतिक सुखों के प्रति आकृष्ट होकर जीवनभर उसी में लिप्त रहता है और इसी को बहुत बड़ा सुख मानता है। किन्तु अंदर सुख भंडार इतना विशाल है कि उसका ज्ञान हो जाने पर उसका स्रोत निरंतर प्रवाहित होता रहता है। मैं कौन हूं ? कहा से आया हूं ? कहा जाऊंगा ? इन तीन प्रश्नों से आत्मसाक्षात्कार प्रारंभ होता है। मानव अपने आत्मा को जानने का कभी प्रयास ही नहीं करता। उसकी दृष्टि बहिर्मुखी होती है। सत्संग के प्रभाव से, शास्त्रों के अध्ययन से और गुरुओं के सान्निध्य से जब मानव का विवेक जागृत होता है तो उसे आत्मतत्व जानने की प्रेरणा मिलती है। संसार का आनंद आत्मतत्व के आनंद का बिंदुमात्र है। आत्मतत्व का आनंद सिंधु के समान है और सांसारिक आनंद बिंदु के समान है।